मुझसे छीन ली गयी मेरी नदी

निर्वासन में अग्निशेखर की कविताएं

पूर्वकथन

विद्वान लोग नब्बे के दशक की बदलती हुई दुनिया को संक्रमणकाल कहें या उत्तर - आधुनिकता, परन्तु यह तीखी सच्चाई है इस बीच एक से बढ़कर एक त्रासद घटनाक्रम ने हमारी सोई हुई अंतरात्मा को हल्के से छुआ तो जरुर, पर झकझोरा नहीं। हमारे संवेदन शून्य होने का इस से बढ़कर और क्या सबूत हो सकता है कि हमने बुरी खबरों पर चौंकना तक छोड़ दिया है। हमारे चारों तरफ या तो उदासीनता का कोहरा है या फिर पूर्वग्रहों का गर्दो-गुबार। मानवीय जीवन की स्वतन्त्रता और उसके अक्षुण्ण अधिकारो के लिए सार्वभौम सम्मान और प्रतिबद्धता दोनों पर खतरा मंडरा रहा है।

ऐसे में जीवन को जीवित और सुरक्षित रखने की दृष्टि से इस संसार को झिंझोड़ दिये जाने की जरूरत है। ताकि भविष्य की पीढियों के सवालों के आगे हमें खामोश न रहना पड़े। यह मुश्किलों से जूझने का समय है, न कि इतिहासकार बनने का। मेरे लिए इतिहास का सच कविता के सच से बड़ा और महान नहीं। उसमें तो हमारे कुछ सत्य होते ही नहीं। मसलन विगत छह बरस के वर्तमान कश्मीर के इतिहास का सच अपूर्ण है।

॥ ॐ ॥

परम श्रद्धेय डॉ. भूषण लाल
कौल जी के लिए सादर
भेंट।
डॉ. कौल मेरे गुरुवर हैं,
इसलिए संकोच और
विनम्रता के साथ।
मुझे आपका अपार स्नेह
और मार्गदर्शन मिला
है।

03/11/97

मुझसे छीन ली गई मेरी नदी

मुझसे छीन ली गयी मेरी नदी

अग्निशेखर

शारदापीठ प्रकाशन

मूल्य : 100/-

© अग्निशेखर

प्रथम संस्करण : 1996

प्रकाशक : शारदापीठ प्रकाशन

आई जे काम्पलैक्स, दूसरी मंजिल

जी-29, सुभाष चौक

लक्ष्मी नगर, दिल्ली-92

मुद्रक : लियो प्रिन्टर्स

प्रीतविहार, दिल्ली फोन : 2209913-14-15

MUJH SE CHHIN LI GAYI MERI NADI

Poems by AGNISHEKHAR

प्रकाश पेंडके और छांवली के लिए

क्रम

तड़प :9
थोड़ा सा प्रकाश :10
मारीना त्स्वेतायेवा :11
पूछता है बच्चा :13
उदास है सुई :14
तूत के अंगार :15
ऊन के दस्ताने :16
गलियां :17
माइकिल एंजिलो की पहली बहन :19
माइकिल एंजिलो की दूसरी बहन :20
माइकिल एंजिलो की तीसरी बहन :21
घास :22
तमस :23
डूब रहे हैं :24
नुंद ऋषि -1 :25
नुंद ऋषि -2 :26
मेरी खाल से बने दस्ताने :27
मुजाहिद से प्रार्थना :28
तुम्हें देखा :29
भय मुक्त :31
सुरंग में :32
सफदर हाशमी मार्ग-1 :35
सफदर हाशमी मार्ग-2 :34
जिन्दा :35
दस्तकें :36
आस :37
चांद :38

इस बार कहानी हो तुम :39
तसलीमा नसरीन :41
कश्मीरी मुसलमान-1 :42
कश्मीरी मुसलमान-2 :43
बारिश में पतंग :44
लू-1 :45
लू-2 :46
अस्थियां :47
अभिशाप :48
अलग-थलग :49
कैंप में चिडियां :50
अयोध्या :51
एक खोये हुए पिता का बच्चा :52
बैठने के ढ़ंग :53
काजल का टीका :54
यहां :55
ललद्यद के नाम-1 :56
ललद्यद के नाम-2 :57
ललद्यद के नाम-3 :58
मुझसे छीन ली गयी मेरी नदी :59
कवि लोग :60
हम ही :61
नर्स सरला भट्ट :62
सुमित्रा :63
वतन :64
कविता में झूठ :65
माताएं :70
चींटी :71
खुली खिड़की से बारिश :72

जोखिम :73
मुझे डर लगता है :74
संजना कौल के बारे में :75
जम्मू :76
हिजरत :77
बंसी पारिमू से :78
१६ जनवरी १६६० की रात :79
गूंगे अंधेरों से :80
ज्योति-पर्व :81
एक व्यक्तिगत कविता :82
बर्फ़ की याद :83
कुशल समाचार :84
साइकिल :85

तड़प

अरे, मेरा करो अपहरण
ले जाओ मुझे अपने यातना-शिविर में
कुछ नहीं कहूंगा मैं
करो जो कुछ भी करना है
मेरे शरीर के साथ
ज़िन्दा जलाओ, काटो
या दफन करो कहीं मुझे
नदी के किनारे
बर्फीले पहाड़ों पर
किसी गांव में
या कस्बाई गली में
कहीं घूरे के नीचे

मैं तरस गया हूं
अपनी ज़मीन के स्पर्श के लिए

□

थोड़ा सा प्रकाश

मेरी सोयी हुई मां के चेहरे पर
किसी छिद्र से पड़ रहा है
थोड़ा सा प्रकाश
हिल रही हैं उसकी पलकें
कौन कर रहा है इस अंधेरे में
सुबह की बात

□

मारीना त्स्वेतायेवा

(वरयाम सिंह के लिए)

मेरी गहरी नींद में उसने
टार्च की लंबी रोशनी फेंकी
और मैंने उसे अपने अंदर गिरती बर्फ़ में
पेड़ के नीचे खड़े देखा

रात के घने अंधेरे में कहा उसने
मैं न तुमसे प्रेम करूंगी और न विवाह
मैं बचाना चाहती हूं तुम्हें ध्वस्त होने से

मैंने उसे अपनी मां के बारे में बताया
जिसने हमारे नये वर्ष की सुबह
मुंह देखने के लिए
सिरहाने की थाली में रखा था
उसका कविता-संग्रह
उसने महसूस किया दुनिया में हर कहीं
वह अपने ही घर में है

उसने जानना चाहा मेरे उस प्रेम के बारे में
जिसने धकेल दिया मुझे
जलावतनी में
वह उलटती पलटती रही
मेरी फिर से जमा हुई किताबों को

और कुरेदती रही
मेरे छूटे हुए वतन की स्मृतियों को

मैंने उससे शिकायत की
लम्बे अर्से से चिट्ठी न लिखने की
वह भागी
गिरती हुई बर्फ में यह कहकर
पहले लेकर आऊंगी
कविताओं के दिन

□

पूछता है बच्चा

पापा, क्या उग्रवादी होता है
खतरनाक
उसकी मूछें कितनी बड़ी होती हैं
उसके सिर पर होते हैं
कितने सींग
हम चुपके चुपके छीन लेंगे
उसकी बंदूक
और फेंक देंगे दरिया में
पापा, तब क्या करेगा उग्रवादी?

पापा, अगर सबसे तेज़ दौड़ता है मन
तो हम उसे इंजन के बदले
लगाये जहाज में
कितना तेज़ दौड़ेगा जहाज़ पापा
हम उसमें चुपके से जाएंगे घर
और ले आयेंगे अपने खिलौने
पापा, क्या हमें फिर भी पकड़ पायेगा
उग्रवादी ?

□

उदास है सुई

अभी सुरक्षित है
संग्रहालय में बुर्ज़होम[1] का एक ठंडा शरीर
पांच हज़ार बरस से अधिक पुराना
एक सोया हुआ गवाह
उसके सिरहाने के पास ही पड़ी है एक सुई
अकेली और गुमसुम
कोई चुराकर ले गया है उसका धागा
अनसिली रह गयी है
हज़ारों बरस पुरानी सुई की
बेशुमार इच्छाएं
निष्प्राण है संग्रहालय में
हमारा पूर्वज
क्या सियेगा अब वह हमारा
फटा हुआ लिबास
नंगे हैं हम
हमारी आत्मा का धागा है गुम
उदास है सुई

□

---

1. कश्मीर का प्रसिद्ध उत्खनन स्थल

तूत के अंगार

जब कविताएं वजह बनीं
मेरे निष्कासन की
मैंने और ज़्यादा प्यार किया
जोखिम से
अवसाद और विद्रोह के लम्हों में
मैंने मारी आग में छलांग
और जिया
शायर होने की कीमत अदा करते हुए

मुझ तक आने के रास्ते में बिछे हैं
तूत के दहकते अंगार
कौन आता नंगे पांव
मेरी वेदना के पास

□

ऊन के दस्ताने

हम बर्फ़ के बुतों से हो गये हैं
हमने एक दूसरे के लिए खो दी है ऊष्मा
खो दिए हैं ऊन के दस्ताने

बहुत दिनों तक बहरहाल करते रहे
दिन और मिज़ाज बदलने का इंतज़ार
जैसे आनी हो कोई चिट्ठी
धरते रहे कान
हर डाकिये की आहट पर

कैसे चूम सकते हैं
बर्फ के बुत एक दूसरे को
हमें एक दूसरे की उपस्थिति का मौन
सुनाई पड़ता है
घड़ी की टिक् टिक् सा

कड़ाके की ठंड है चारों तरफ
और हम जैसे बरसों से
बिना आंच की खाली कांगड़ी बेमतलब
ताप रहे हैं

हे भगवान !
कोई लौटा दे इस ठंड में
हमें हमारे ऊनी दस्ताने

□

गलियां

कितनी ही गलियों को जानता था मैं
अंधेरे में भी शहर के किसी सिरे से घुसकर
गलियों गलियों निकलते थे मित्रों के साथ
बातों के अनजान छोर से बाहर
खुली हवा में
कई बार भीग जाते थे बारिश में हमारे कपड़े
तब किसी बंद दुकान के छज्जे के नीचे
याद करते थे कि हमारे घरों में
कितने छाते हैं
या नये छातों की कीमत से
शुरू हो जाती थीं हमारी बददुआएं
मैंने कितनी ही बार कोशिश की होगी
अपनी गलियों के बारे में कोई कविता लिखने की
एक दिन मेरे सपने में आयीं गलियां
और प्यार से मेरे कान मरोड़ते हुए बोलीं,
हम कैसे आ सकती हैं अपनी जगह छोड़कर
तुम्हारी कविताओं को ही चाहिए
गलियों में हमारे पास आना

कितने दिन बीत गये
नये-नये शहर बदलते हुए इस बीच
कहीं भी मुझे मिली नहीं
वे सगी बहनों सी गलियां
जिनमें हज़ार बातों की बगल से
गुज़रा होऊंगा
उसी तरह दोस्तों के साथ

□

माइकिल एंजिलो की पहली बहन

वह कातती है धागा
ठहरी हुई चीज़ों के लिए वह कातती है गति
दौड़ पड़ते हैं बच्चे
उड़ती हैं चिड़ियां
हरी घास की तरह फैलती है मुस्कान
यादें खोलती हैं पंखुड़ियां
उसके धागा कातने से बजता है समय
मैं सुनता हूं अपने भीतर
कातने की आवाज़
जो उतरने लगती है कागज़ पर
सघन कविता की तरह
माइकिल एंजिलो, मैं तुम्हारी बहन से
करता हूं प्यार
वह मुझे कात रही है महीन

□

माइकिल एंजिलो की दूसरी बहन

ओ, धागा नापने में व्यस्त
माइकिल एंजिलो की दूसरी बहन
तुम्हें ही मालूम है
यहां किसके उधड़े ज़ख्मों को सिया नहीं जाना है
यह पृथ्वी, आकाश, तारे, पंछी, मौसम,
लोग और उनकी आकांक्षाएं
जिस धागे से बंधी हुई हैं
तुम ही जानती हो
वह कितना कमज़ोर हो चुका है

बहन, तुम जानती हो कि किसके कितने
आयाम हैं
और कमी भी नहीं है तुम्हारे पास नापने के लिए
अनंत धागे की
मैं साहस नहीं कर पा रहा तुमसे कहने की
कि तुम्हारे लिए मैंने छिपाकर रखा है
अपना कपास

□

माइकिल एंजिलो की तीसरी बहन

वह झटककर तोड़ती है धागा
और बची हुई मनुष्यता को मरने नहीं देती
ऐसा नहीं कि तोड़ना उसकी आदत है
और अपनी बहनों से बनती नहीं उसकी
जिन लोगों ने तीनों बहनों के सामने से गुज़रकर
उन्हें आपस में बतियाते हुए देखा है
जानते हैं वे उनके आपसी प्रेम को

परन्तु यह बहन तोड़ती रहती है धागा
उसे पसंद नहीं कि मन से उखड़ने के बाद भी
वह ढोती फिरे घिसे हुए संबंध
और भूल जाए खुली हवा में सांस लेने की आदत

माइकिल एंजिलो, मैं तुम्हारी इस बहन को
दिखाना चाहता हूं अपना बहुत सा धागा
जो मेरे अंदर उलझा पड़ा है
गचड़-पचड़ में

□

घास

हर तरफ
आदमी से ऊंची घास थी
घनी और आपस में गुंथी हुई
वहीं कहीं थी हमारी पगडंडी
जिसे हम खोज रहे थे
अंधेरा था
मालूम नहीं पड़ रहे थे पैर
कहां उलझ रहे हैं
हमें पहुंचना था अपनों के पास
फड़फड़ा रहा था दिल
सन्नाटे में झूम रही थी घास
उन्हीं कुछ लम्हों में बचाना था
हमें अपना इतिहास

□

तमस

तमस हर तरफ खिंचा पसरा था
जैसे खड़ा था सामने एक भयानक रीछ
और हम सहमे हुए थे
खो गया था सबका दिशाबोध
घड़ियों में ज़रूर बज रहा था कुछ
पता नहीं कहां पर थे उस वक्त खड़े हम
खत्म हो जाने के खिलाफ मूक
किसी भी छोर से सूरज उगने तक
हमने बचायी किसी तरह
जीवन की लौ

डूब रहे हैं

धंसते जा रहे हैं हम
पहाड़ों से उतरकर
दलदल में
किसे आवाज़ दें रात के इस पहर में
दूर दूर तक पानी पर
झूल रहा है
आधे कोस का चांद
सन्नाटे में डूब रहे हैं हम

नुंद ऋषि-1

जिसके कंधे पर सिर रखकर कभी
फूट फूटकर रोना था मुझे
वह खुद तलाश में है एक कंधे की

काठ की खूंटी से टंगे
तुम्हारे फिरन के साथ
हमारी कितनी स्मृतियां जुड़ी थीं
रोती है यहां जलावतनी में मेरी मां
इत्मीनान से मरने की जगह से वंचित
बरसों पुरानी काठ की सन्दूकची को याद कर
वह पगला जाती है इस कुंभीपाक में

मेरे एक कविमित्र ने अभी
हाल ही में कहा था
कि वह कभी वतन लौटने के बाद
सबसे पहले जाएगा चरारे शरीफ

क्या पता इसी कारण
जला तो नहीं डाला गया
तुम्हारा घर और गाँव

मैं स्थगित करता हूं
एक बार तुम्हारे पास रोने की तमन्ना
और पेश करता हूं तुम्हारे लिए
अपना धड़कता हुआ कंधा
जिस पर तुम भरोसा कर सकते हो

□

नुंद ऋषि-2

ललद्यद ने कराया उसे स्तनपान
और उसने कविता में
दूध की नदियां बहा दीं
कवि होने की सज़ा में
उसे खिलायी गयी जेल की हवा
भस्मसात हुआ ज़रारे शरीफ

मेरे जन्म से पहले
मेरी मां ने बांधा था चरारे शरीफ में
मन्नत का धागा
और पिलाया है मुझे भी
पडोसी नूरदीन की मां ने
अपनी छाती का दूध
मुझे भी उखाड़ दिया गया
अपनी ज़मीन से
राख है आज मेरा भी घर और मुहल्ला

मगर यह दूध ही है
जो आज भी फूटता है
ज़िन्दा कविताओं के रूप में
इतनी नाखुशगवार आबोहवा के
बावजूद

□

मेरी खाल से बने दस्ताने

दस्तानों में छिपे हैं
हत्यारों के हाथ
एक दिवंगत आदमी कह रहा है
हर किसी के सामने जाकर,
ये दस्ताने
मेरी खाल से बने हुए हैं

खुश हैं हत्यारे
कि सभ्य लोग नहीं करते हैं
आत्माओं पर विश्वास

□

मुजाहिद से प्रार्थना

तुमसे बेहतर कौन शिनाख्त कर सकता है
हमारे इन मरे हुए लोगों की
दोस्त, तुम ही हमारी मौत को समेटने में
बटा सकते हो हाथ हमारा
हम नहीं दिलायेंगे तुम्हें याद
कवि पाश की मां ने कभी
जो प्रार्थना की थी
तुम्हारे धर्मगुरु से

देखो, तुम ही बता सकते हो
इस औरत की बंद मुट्ठी में
यह किस बच्चे की उंगली है

तुम जहां भी हो
वहीं से देख लो हमें एक बार
अब कुछ नहीं कहेगी तुमसे
पाश की मां
वह तो पहचान भी नहीं पायेगी तुम्हें

□

तुम्हें देखा

तुम्हें बरसों बाद देखा
जैसे आज फिर पहली बार देखा
और ठगा रह गया
एक दूसरे का खूब खूब स्पर्श करती
आतुर आंखों ने कोसा आंधियों को
किसे समझायें
कितना कुछ उखड़ गया है इस बीच
एक भी पेड़ नहीं है दूर तक
जिसकी घनी टहनी पर जा बैठते हम
पत्तों के बीच इसी वक्त
और किसी को पता भी नहीं लग पाता
ओ, मेरी आत्मा !
यहां ज़ख्मों की तरह खुलती हैं
अर्जित गोपनीयताएं सबके सामने

कहां सहेजकर रखूं इन लम्हों को
जिनमें हम दो शापग्रस्त लहरों की तरह
खड़े हैं आमने-सामने
और एक दूसरे को नहीं ले पाते हैं बाहों में
मुझे कभी यह भी लगता है
कि हम खड़े हैं
राष्ट्रीय अभिलेखागार की अलमारी में

अपने दिनों के संवेदनशील
मूर्तिशिल्पों की तरह
तुम्हें बरसों बाद देखा
अधजले मकानों के धुएं और
बलात्कार की दबी चीखों के स्वर्ग से निकलकर
एक जाति संहार के महापर्व पर
यहां अचानक

□

भय-मुक्त

घर के अंदर भी खतरा था
घर से बाहर भी था जोखिम
उन्होंने खाया तरस
हमारी हालत पर
और एक एक कर फूंक डाले
हमारे घर
अब न अंदर खतरा है
न बाहर जोखिम

□

सुरंग में

बरसों लंबी संकरी सुरंग में
टटोलते हुए एक एक कदम
हम दे रहे हैं कितना इम्तेहान
फिलहाल सरक रहे हैं हम
सुई की नोक जितनी
रोशनी की तरफ

□

सफदर हाशमी मार्ग -1

तुम्हारे नाम पर
दिल्ली की एक सड़क का नाम है
यहां कन्धे से झोले लटकाए
टहलते हुए मिलते हैं
कवि, रंगकर्मी, कलाकार
ठिठक जाते हैं मेरे पांव हर बार....
अभी किसी रिहर्सल से लौटकर
हाथ में पाण्डुलिपि लिए
खड़े हो जाओगे मेरे सामने
धुले हुए सफ़ेद कुरते में
जैसे कोई राजहंस
'अरे, तुम अग्निशेखर..
कितने अच्छे थे कश्मीर के वे दिन !'

त्रिवेणी के रेस्तरां में
गिरती है चाय की प्याली में
आंसू की एक बूंद
और मैं करता हूं रुमाल से ऐनक साफ
इस समय कोई नहीं है यहां
सिवाय एक आदमी के
जो पोस्टर पढ़ रहा है

□

सफदर हाशमी मार्ग -2

उनके पास पहुंचने से पहले
वहां नहीं थी खामोशी
वे बोल रहे थे तल्ख विषयों पर
जिनसे मैं भी था सहमत

उनके पास पहुंचने से पहले
उमस नहीं थी वहां
चेहरे नहीं थे भावशून्य
पतझड़ी पत्तों की तरह पीले से
उन्होंने सुनी मेरी कथा बेमन
दूसरा तीखा रंग ... साम्प्रदायिक
कुरूप .. वीभत्स
दूब पर फैल रहा गाढ़ा लहू

वे दिखते रहे सहमत से
हिलाते रहे सिर शालीनता के साथ
कभी कभी लेते रहे जम्हाई
जैसे निगल जाएं मुझे अपने अन्दर

□

ज़िन्दा

मोड़ नहीं सकती है मछली पानी का प्रवाह
न रोक ही सकती है उसकी मनमानी
वह पानी में दिल थामकर बैठे
चिकने पत्थरों के आगे-पीछे ढूंढती है
अपने जैसों को बेसब्री से
वह उतरती है सेवाल के घने वनों में
देती हुई आवाज़
काटती है नदी की धार
वह जब देखती है ज़रा ठहरकर
पानी के साथ बह जाते हुए
अपने कई कई परिचितों को
उसे होता है संतोष
कि अभी जीवित है वह

दस्तकें

बंद दरवाज़ों ने
बुलाया दस्तकों को अपने पास
घबराया समय
और दस्तकों को हुआ कारावास
इस तरह हर युग में
बंद दरवाज़े रहे उदास

□

आस

बूढ़ा बिस्तर पर लेटे
आंखों-आंखों नापता है आकाश
फटे हुए तम्बू के सुराखों से
उसकी झुर्रियों में गिर रही है
समय की राख

चुपचाप घूम रही है
सिरहाने के पास
घड़ी की सुई
उसकी बीत रही है
घर लौटने की आस

□

चांद

बादलों के पीछे
कैद है चांद
अंधेरे में डुबकी मारकर
आये हैं दिन
खुली खिड़कियां कर रही हैं
बादलों के हटने का इन्तज़ार
उमस में स्थगित हैं
लोगों के त्यौहार

□

इस बार कहती हो तुम

अनकहे शब्दों के बीच
ठंडी रेत पर चलते चलना
और थककर फैलना हवा में
समुद्र की लहरों का इंतज़ार ...
फिर झाड़ना तलुवों से रेत
जैसे स्मृति से पाना मुक्ति
और बरसों बाद
खुल जाना घाव का सीना अनायास
कुछ देर

समय चुनता है
ठंडी रेत पर चलने के लिए मुझे हर बार
कुछ दिनों रास आने लगता है
अगल बगल में साथ-साथ चलना
समांतर संसार ।

फिर एक सूर्यास्त होने जा रहा है
चिनार के पीछे
मैं सहेज रहा हूं बीत रहे लम्हों की ताकत को
अपने रक्त और मज्जा के भीतर

पर इस बार कहती हो तुम
बहुत हो चुके हैं सूर्यास्त अब तक

हम किसी भी अंधेरे में
पकड़े रखेंगे एक दूसरे का गर्म हाथ
और निकलेंगे ठंडी रेत से बाहर
इस बार समय का चुनाव
करेंगे हम

□

तसलीमा नसरीन

क्यों सुनी तुमने आत्मा की चीत्कार
तुम्हें छोड़ना नहीं पड़ता
रगों में बहता सुनहला देश
यहां कितने लोगों को आयी लाज
अपनी खामोशी पर

मुझे नहीं मिला कोई भी दोस्त
जिसने तुम्हारे आत्मघाती प्रेम पर
की हो कोई बात
मैं हूं स्वयं भी जलावतन
और लज्जित भी
कि तुम्हारे लिए कर नहीं सका
मैं भी कुछ

□

कश्मीरी मुसलमान -1

कितना भीग जाता है मेरा मन
खुली खुली पलकों से आकर
टकराता है घर
मेरा देश
पूरा परिवेश
खुलती हैं घुमावदार गलियां
उनमें खेलने लग पड़ता है बचपन
बतियाती हैं पडोस की अधेड़ महिलाएं
मज़हब से परे होकर
एक बूंद आंसू से धुल जाती हैं
शिकायतें
जलावतनी में जब देखता हूं
किसी भी कश्मीरी मुसलमान को

□

कश्मीरी मुसलमान -2

हमारी एक दूसरे को सीधे
देखने से कतराती हैं आंखें
हम एक दूसरे को नहीं चाहते हैं
पहचान पाना इस शहर में
दोनों हैं लहुलुहान
और पसीने से तर
फिर भी ठिठक जाते हैं पांव
कि पूछें, कैसे हो भाई

□

बारिश में पतंग

इस बारिश में
कैंप के पिछवाड़े
मुर्दा भैंस के कंकाल में छिपाकर
रख आता है एक बच्चा
अपनी पतंग
तम्बू से उठ गया है
उसका विश्वास

□

लू -1

तपी हुई धरती पर रखे
चिनार से मेरे पिता ने
अपने हरे पांव -
हे राम !
राशन, पानी और टैंटों के लिए
निकाले गये जुलूस में चलते हुए
कहा उन्होंने
मेरी जल रही हैं पलकें -
मैंने उनके सर पर रख दी
गीली रूमाल ...
पुलिस ने छोड़े आंसू के गोले
भाग गये विस्थापित

पिता बैठ गये एक गली में
खम्भे के साथ, बोले-
चलो करते हैं धर्म-परिवर्तन ही
और लौट जाएंगे
घने चिनारों की छांह में
वहीं मरेंगे अपनी मातृभूमि में
एक ही बार
पिता देखते रहे धूप में अवाक्
और वहीं पर
हो गये ढेर

□

लू -2

इस धूप में
पगला गयी है मेरी मां
झर गये हैं उसके पत्ते
उसकी स्मृतियां
रहती हैं दिन भर निर्वस्त्र
हो गयी है मौन ...
वेदनाओं से मुक्त
किसी पोखर सी उदासीन
लू चल रही है
और डाक्टर लिखते हैं एक ही उपचार
चिनार की हवा !
क्या करूं मां
मेरे बस में नहीं है
यह दवा

□

अस्थियां

ओ पुरातत्ववेत्ता भविष्य,
जीवित हो उठेंगी तुम्हारे सामने इन जगहों पर
हमारी निष्पाप अस्थियां
कहेंगी तुमसे
बहाओ हमें कश्मीर ले जाकर
वितस्ता में

उस वक्त खुल जाएंगी तुम्हारी आंखें
जैसे खुलते हैं गूढ़ शब्दों के अर्थ कभी
अपने आप
इन जगहों पर
कुछ मायूस घास उगी होगी
एक दूर छूटी याद में सराबोर

□

अभिशाप

हमें मार नहीं सका पूरी तरह
कोई भी शस्त्र उनका
न जला ही सकी
हमें कोई आग
कोई भी सैलाब
डुबो नहीं सका हमें पूरी तरह
हमें उड़ा नहीं सकी हवा
सूखे पत्तों की तरह

हम मर गये
छटपटाती आत्मा की
अमरता के अभिशाप से यहां

□

अलग - थलग

एक एक कर जला दिये गये हैं पुल
अरसा हो गया हमें
आर - पार बंटे हुए
बाहर भीतर

हमारे सामने नदी में गिरकर
डूब गये हैं कुछ लोग
नदी का क्या बिगड़ता है
पुलों के होने न होने से
हम ही पड़ गये हैं अलग-थलग
सदियों दूर
आमने सामने

□

कैंप में चिड़ियां

इन दिनों मेरी बिटिया निहारती है
कैंप में चिड़ियों को
सुनती है धूप में उनकी बातें
और देर तक रहती है गुम
सामने सामने
उड़ जाती हैं टैंटों की रस्सियों से
एक साथ बीसियों चिड़ियां
सूनी हो जाती है मेरी बिटिया
लुप्त हो जाती है उनकी चहक
फिर अनायास पूछती है-
पापा, हम कब जाएंगे घर ?

□

अयोध्या

जीवित हो रहे हैं मुर्दे
अयोध्या का जाप करने वालों की
खुल रही हैं आंखें
चुकाया नहीं जा सकता है
मुर्दों का ऋण
अतीत खुजा रहा है पांखें
धर्म
सिर पर नहीं
छतों पर चढ़कर अब बोलता है नगर में
प्रतिष्ठित हुई हैं ईटें
देवताओं की तरह पूजित
मरी हुई ईटें
इतिहास का वितरित हुआ प्रसाद

हे राम !
तुम कितनी त्रासदियां देखोगे

□

एक खोये हुए पिता का बच्चा

मरूस्थल पर मस्ती करता हुआ बच्चा
बैठे हुए ऊंट की गर्दन से झूलकर
कल्पना करता है पिता की मजबूत बाहों की
और देखता है पास खड़ी इकहरी मां की आंखों में
थोड़ी सी चमक
वह रेत उलीचता हुआ भागता है तृषा से बेहाल
मां के अंदर तक
और लौटता है घर की तरफ चुपचाप कदमों से
कुछ देर के बाद वह आंखों आंखों चढ़कर
छान मारता है समूचे पेड़ को
और फुनगी से बाहर ब्रह्माण्ड में झांककर उतरता है
मां की गोद में
देता है दिलासा कि उसने देख लिया है
एक तारे के पीछे छिपकर बैठे पापा को
वह आयेंगे एक दिन हमें बिना बताये...
मां ढक लेती है पलकों के पीछे
उसकी मासूम सांत्वना

बच्चा देखकर ईश्वर के हाथों में ढेरों हथियार
पूछता है मां से
कि क्या ईश्वर भी करते हैं लड़ाइयां
वह पहुंचता है मां की खामोश तलहट तक
जैसे हो अंगार सा कोई शब्द
निस्तेज दुनिया की सूखी हुई घास पर
मां उसके सर पर फेरती है
निःशब्द हाथ

□

बैठने के ढंग

जिस शहर के लोग ज़्यादा गालियां नहीं जानते, वे चौपायों की तरह
तीन या चार मुद्राओं में ही बैठना जानते हैं।
मुझे खलबली सी लगती है अपनी मौजूदगी ऐसे लोगों के बीच।
मैं दिनभर अनगिनत मुद्राओं में बैठकर खोजता रहता हूं उस बेहतरीन मुद्रा को जो अभी तक बन ही नहीं पायी।
जब से मैं रहा नहीं चौपाया, किसी भी मुद्रा में बैठकर मुझे यह सभ्य जीवन आया नहीं रास।
मुझसे तो ये बेजान चीज़ें ज्यादा सफल हैं, जो निश्चित मुद्राओं को पाकर हमारे सामने हैं, और उपलब्ध हैं, जैसे मेज़ पर ऐशट्रे या फाइल के पास कांच पर रखा हुआ पेपरवेट।
दरअसल मुझे बैठने की मुद्राएं बदलते लोग एक यात्रा में लगते हैं।

□

काजल का टीका

नवजात बच्चे ने
टैंट से बाहर हाथ निकालकर
मुट्ठी में भींच लिया सूरज
और झुलस गयीं उसकी किलकारियां

उसने टैंट के अंदर घुस आये
बादलों को निचोड़ा
और बह गया उसका बचपन

घुटनों चलते
उसने टैंट की एक रस्सी पकड़ी
और हो गया आश्वस्त
मुट्ठी में देखकर सांप
बच्चा हो रहा है बड़ा
उसके माथे पर किया है उसकी मां ने
बड़ा सा काजल का टीका

□

यहां

एक एक बरस दूर सरक रहे हैं मेरे घाव
और बिना आवाज़ किये
काट रही हैं चक्कर उनके इर्द गिर्द
मेरी स्मृतियां

लौट रही हैं वापस लहरें
विलीन होने के लिए चुपचाप काले समुद्र में
वहीं कहीं
हिचकोले खा रही हैं मेरी कविताएं
मैं यहां से देख रहा हूं सूरज का डूबना
और धूमिल होते जाना
चारों तरफ की दुनिया का

कोई नहीं कर रहा है किसी से संवाद
मैं दूर जाना चाहता हूं कहीं
स्मृतिविहीन होकर
पानी में बहती किसी शहतीर सा

□

ललद्यद के नाम

(1)

तुमने समय के तंदूर में मारी छलांग
और उदित हुई तन ढककर
स्वर्ग के वस्त्रों में
बिखेरते हुए बर्फ़ सा प्रकाश कहा तुमने,
'कौन मरेगा और मारेंगे किसको'

तंदूर में तुम्हारे कूदने
और उसमें से निकलने के बीच की वेला में
शताब्दियों के बाद
आज फिर तप रही है तुम्हारी संतान

विकल्प की आग में छलांग है हमारा निर्वासन
और उसके फुफकारते फनों पर
लास्य-नृत्य करते हुए
तुम्हारा प्रादुर्भाव है हमारा स्वप्न

□

Excellent

(2)

तुम्हारे पास तो भी कच्चा धागा है
जिससे तुम खींच रही हो समुद्र में नाव
मेरे पास कुछ भी तो नहीं है
गरमी के इस कहर में
नंगे तलुवों से मापते हुए अन्तहीन रेत
सूरज को रोकने की कोशिश है
माथे पर धरा मेरा बेखून हाथ
तुम पार तरने के लिए
कर रही हो अपने ईश्वर से मनुहार
मैं किसे पुकारूं
मेरे देवी-देवता भी मेरे साथ हैं जलावतन
तुम्हें तो विश्वास है
कि उस पार है तुम्हारा घर
जिसके लिए तुम हो मेरी ही तरह बेचैन
पर मेरे घर का शेष है
अस्थि-विसर्जन

□

(3)

हम पर भी कसी गयीं फब्तियां
समय की टेढ़ी आँख ने
चुना हमें ही
अपनी ही सड़कों पर
हमारे पीछे भी लगा वही आदमी
जिससे बचने के लिए
तुमने मारी थी छलांग तंदूर में
और तुम तो निकली थीं
स्वर्ग के वस्त्र पहन कर
हम तुम्हारी बेटियां झुलस रही हैं
इस अलाव में

□

मुझसे छीन ली गयी मेरी नदी

मुझ से छीन ली गयी मेरी नदी
बदल दिया गया उसका नाम
बंद हो गया उसमें दियों का बहना
मुझ से छीन ली गयी चिनार की छांह
उसका कर दिया गया लिंग-परिवर्तन
वह थी मेरी भुवन-व्यापिनी मां
उसके रोम रोम से मुस्कुराती थी
मेरे सपनों की कोंपलें

एक दिन चुपचाप बदल दिये गये
मेरे सैंकड़ों गांवों के नाम
जैसे आंख मूंदकर पहुंचा दिया गया हो
किसी अरब-देश में
मुझसे छीन ली गयी मेरी भाषा
छीलकर फेंक दी गयी उसकी लिपि
इस तरह सदियों की ठंड में
बर्फ होती गयी मेरी आवाज़
मुझसे छीन लिया गया मेरा चेहरा
और सब तरफ से पहचान लिये जाने के डर से
मैंने बदल लिया हुलिया
और घूमता रहा गलत फहमी में बेखौफ़

मुझसे छीन लिए गये धीरे-धीरे
मुस्कान, बर्फ़, पहाड़ियां,
पेड़, मौसम, त्यौहार
और समूची मातृभूमि अबकी बार

□

कवि लोग

बरसों से भूखी हैं
कविताएं
कवि लोग करवा रहे हैं
उनसे बंधुआ मज़दूरी
शोषण कर रहे हैं
भुक्खड़ कवि
और आलोचक सो रहे हैं
चालान की बहियों पर

फड़फड़ा रहे हैं ज़मीन पर पड़े
सूखे पतझड़ी पत्ते ।
बाज़ार में
महंगे दामों पर भी उपलब्ध नहीं है
कविता की आदिम खुराक
न उसकी प्यास के लिए
बची है मैल से कोई नदी

□

हम ही

अनुमान लगा सकते हैं हम
किसका शव मिला होगा वितस्ता नदी से
किसको दी गयी होगी फांसी
सेबों के बाग में
किसको ले गये होंगे घर से उठाकर
आंसू किसके गिरे होंगे
ओस की तरह
घास पर
अनुमान लगा सकते हैं हम
यहां जलावतनी में

□

नर्स सरला भट्ट

उन्हें वह देती है निकालकर
अपनी रगों से खून
पोंछती है उनके हताहत शरीर
सांसों से करती है उनका मरहम
दूसरे कमरे में बिस्तर पर
निकाली जा रही है उसके एक घायल
संबंधी की जान
सिहर उठता है उसका रोम रोम
पुलिस को मिलता है चार दिनो के बाद
अस्पताल की सड़क पर पड़ा
उसका मथा गया शव
खुली थीं जिसकी आंखें
बीमारों का जैसे पूछती हुई हाल

□

सुमित्रा

झूठ नहीं बोलेंगी हवायें
झूठ नहीं बोलेगी पर्वत-शिखरों पर
बची हुई थोड़ी सी बर्फ़
झूठ नहीं बोलेंगे चिनारों के
शर्मिंदा पत्ते
उनसे ही पूछो
सुमित्रा के मुंह में चीथड़े ठूंसकर
उसे कहां तक घसीटती ले गयी
उनकी जीप
अपने पीछे बांधकर

हम तो बोलते हैं झूठ
कि पहले उसके साथ किया गया था बलात्कार
पर हवाएं क्यों बोलेंगी झूठ

□

वतन

तुम आते हो यहां
दूर दराज़ शहरों में, ओ वतन
और कौंध जाते हो हर रात
लाखों जनों के अलग-अलग सपनों में एक साथ
कोई कश्मीरी नहीं जो पहले नींद से उठकर
सुनाता नहीं अपने अनुभव

तुम ही लू लगने से
हमारे गिर पड़ने में गिरते हो राह चलते अचानक
सांपों के काटे
तुम ही मरे हो हमारे मरने में
और तुम ही ने पोंछे हैं हमारे आंसू भी
यह तुम ही हो
जो फटी हुई पुस्तकों
और टूटी हुई पेंसिलों की तरह पड़े हो
हमारे बच्चों के मैले बस्तों में खूंटी पर

यार, तुम भी क्यों मारे मारे फिर रहे हो
हमारे साथ

□

कविता में झूठ

यह महज़ संयोग नहीं है
कि सूख गया है सड़कों पर
शहीद किए गये मेरे हजारों आत्मीय जनों का लहू
जो नहीं बन सका कोई समाचार
और मेरा सांस्कृतिक नरसंहार नहीं है
एमेनेस्टी इंटरनेशनल के लिए
बोसनिया सी मानवीय त्रासदी
ओ मेरी एकमात्र बची हुई आत्मा !
मैं कैसे कहूं
कि आतंकवादियों ने नहीं
मुझे किया है जगमोहन ने बेवतन
और कमर से बम बांधकर
चिंदियां नहीं उड़ायी गयी हैं सह-अस्तित्व की
सच बोलता हूं मैं
अब मैं कहां रहा दोस्तों की नजरों में
वो प्रगतिशील कवि
मैंने संकट की वेला में गायब
वामपंथियों, कांगरेसियों को ढूंढा
और जाने दिया
शरणार्थियों को आर एस एस के राहत कैंपों में
झूठ कहता हूं मैं
कि जलायी जा चुकी हैं ललद्यद
और हब्बाखातून की कविताएं

सरेआम
और आंधी से
टूटकर गिर रहे हैं चिनार
झूठ कहता हूं मैं
कि अपवित्र हो गयी है मेरी वितस्ता
निष्पाप लोगों की लाशों से
और अखबार वालों को बताते हैं
जॉर्ज फर्नांडीस-
कश्मीरी आतंकवाद के आर्थिक कारण हैं !
खुशी से उछल पड़ता है वामपंथ
जैसे बाइज्जत हो गया हो बरी
सच कहते हैं मानवाधिकारों के दलाल
कि मेरा नहीं हुआ जातीय संहार
और न खास कारण था कोई
घर से भाग जाने का
कहां मरा हूं मैं निर्वासन में
लू से
चिन्ताओं से
नये रोगों से
सरकार की उदासीनता से
हनन तो हुआ है उनका
जिनके पास अधिकार हैं हत्याओं के

अथाह वेदनाओं के मंथन से
आडवाणी के हिस्से में आया

इस बार मेरा अमृत
बदल गया मैं उसके लिए इन्द्र के घोड़े में
मिल गये संघ-परिवार को उदाहरण
और मेरे ज़ख्मों को विज्ञापन
घूमा कैंपों में इश्तहार -
पूरा हिन्दु-राष्ट्र है हमारे साथ !
भागो !
भागो !
भागो !
जम्मू शहर में निकलते हैं शिव सेना के जुलूस
भेज दो बारूद की घाटी में वापस
कश्मीरी विस्थापितों को
बंद कर दो उनका राशन-पानी
जय हो
हिन्दु हिन्दी हिन्दुस्तानी !
कहां आ गये हैं हम
माथे का पसीना पोंछ रहे हैं अभागे छात्र
बंद हैं उनके लिए पुस्तकालय, प्रयोगशालाएं
कालिजों में
शौचालय तक खुले नहीं हैं उनके वास्ते
फटे हुए तंबुओं में पढ़ रहे हैं
नन्हें परिन्दे-
स्वर्ग के बाशिंदे ।
उठायी नहीं उन्होंने आज भी बन्दूक
उनके मन में हालांकि भरे हैं

हथियारों के सन्दूक
अयोध्या में तोड़ दी बाबरी मस्जिद
कारसेवकों ने
पर एक भी मंदिर कहां तोड़ा कश्मीर में
आतंकवादियों ने
सच कहता हूं मैं
नहीं हुए हैं राकेटों से क्षीरभवानी पर हमले
डायनामाइट से नहीं उड़ाया गया है
उमानगरी का प्राचीन तीर्थ
1986 में भी कुछ नहीं हुआ था अनंतनाग में
हां मैं बोलता हूं झूठ
पर झूठ कैसे बोलेंगे बी०जी० वर्गीस
शबाना आज़मी
या 'इंडिया टूडे' जैसी पत्रिकाएं
झूठ बोलती हैं कश्मीर की हवायें
गुमराह हो जाती हैं
संसद की फिज़ाएं
बयान देते हैं रक्षा-मंत्री-
पर्वतों पर हिमपात के बाद मार्च तक
नहीं आ सकेंगे आतंकवादी

टाइम-बम पर बैठे हैं गृहमंत्री
खयालों में उड़ा रहे हैं जहाजों को
उनींदे पायलट
हो रही है चुनाव कराने की बात

बीबीसी खबर देता है उसी रात
कि हजारों पुलिसकर्मियों ने
बगावत में
निकाला है जुलूस
उठाये हैं बन्दूक

लंदन में
सुस्ताते हुए मुस्कराता है फारूख अब्दुल्ला अपने साथ

'तुम्हें क्या याद है अपना वायदा'
पूछते हैं फोन पर उससे
जे के एल एफ के लोग
1947 की तरह ही
इस बार भी दोहराया जा रहा है झूठ

□

माताएं

माताएं कर रही हैं इंतज़ार
सीमा पार गये बच्चों का
दुआएं मांग रही हैं माताएं
उनके सही सलामत लौट आने की

माताएं देख रही हैं
सीमा पर तैनात बेटों की राह
बह रहा है खून आर-पार
सिर्फ बिलख रही हैं माताएं
और कुचली जा रही हैं
नन्हीं घास की तरह दोनों के बीच
कोई नहीं उठा रहा
माताओं के मानवाधिकारों का सवाल

□

चींटीं

दीवाल पर
चावल का दाना ढोती चींटी
ठहर गयी है अकस्मात
घड़ी अलार्म देने के साथ ही
जैसे हांफ रही है घबराहट में
खामोश दिख रही हैं बिजली के प्रकाश में
सामने वाले घर की सीढ़ियां
मेरे बगल के कमरे से आ रही है
संभोग की धीमी आवाज़
मैं सोच रहा हूं
कहीं गिर न जाये चींटीं से चावल का दाना

हम अगर नहीं भी बचें अपनी लापरवाही से
कम से कम बची रहे हमारे पीछे
चावल का दाना ढोती हुई चींटीं

□

खुली खिड़की से बारिश

थोड़ी देर के बाद थम जाएगी बारिश
और सुनाई पड़ेंगी नहाये पेड़ों की चुप्पियां और धुली हुई चीज़ों की उपस्थिति।
मैं तकिये से पीठ सटाकर कब से अपने कमरे में बैठा हूं, इसलिए न मेरी बातों का मैल उतरा है
और न मैं किसी को दिखाई दे रहा हूं।

मैं अंदर बाहर भीगना चाहता हूं इसबार तेज़ बारिश में,
जैसे कि आंगन का वो खुला दरवाज़ा
मैं सोच रहा हूं इस समय सड़क पर चल रहे उन भीगे लोगों के बारे में जिनके पास या तो छाते ही नहीं,
या फिर फटे हुए हैं
खुली खिड़की से बाहर मुझे गली में छींटे उलीचते बेपरवाह स्कूली बच्चों में एक अपनी शक्ल का बच्चा भी दिखाई दे रहा है
बारिश से धुली हुई चीज़ें कितनी साफ दिखाई देती हैं

□

जोखिम

एक लड़की करती है
किसी से प्यार
सड़कों पर दौड़ने लग पड़ते हैं दमकल
साइरन बजाते
कवि चढ़ता है अपनी छत पर
और मुस्कुराता है कुछ पल
वह बदल देता है
अपनी कविता का शीर्षक
बच निकलती है लड़की

□

मुझे डर लगता है

मुझे नहीं डराती है बन्दूक
उसकी नीयत को जानता हूं मैं
मुझे डराती है तुम्हारी
बारूद सी खामोशी
डर नहीं लगता है मुझे
हकीकत को न मान लिए जाने से
मैं डरता हूं तुम्हारी हां में हां से
तुम्हारे सपाट चेहरे से ज्यादा
मेरा पीछा करती है
तुम्हारी बहुभाषी मुस्कान
ऐसे दिनों मरने से अधिक
जीवित रहने की आकांक्षा से
मैं होता हूं भयभीत

□

संजना कौल के बारे में

तुम्हारी याद से
बह निकलती है वितस्ता मेरे सामने से होकर
तुम्हारी खुली खिड़की का अवसाद
ले जाती हुई अपने साथ
कौन कहता है यह
मृत्यु उपत्यका नहीं है मेरा देश
तुम्हारी याद से होता है
मेरी वेदना का रंग और गाढ़ा
समय ने आंखें तरेर कर कितना पक्षपात किया
उन निरीह लोगों के साथ
जो भाग नहीं सके रात के अंधेरे में दबे पांव
मेरी तरह
वे चुपचाप मुड़े वापस अपने घरों को उदास होकर
तुमने इस बीच खिड़की में गुमसुम बैठे
बादलों में कितनी तस्वीरें देखी होंगी
बनते बिगड़ते
क्या नियति इसी तरह
करती है सम्वेदना को एकात्म
तुम्हें कितना डरावना लगता है
कि वितस्ता में सैलाब का पानी चढ़ा है
तुम्हारी खिड़की तक रातों रात
और खुले दरवाज़े पर खड़ा है सूनापन
तुम्हारी याद से सहम जाते हैं मेरे होंठ
मै किसी के पास ले भी नहीं पाता
तुम्हारा नाम

□

यह शहर

यह शहर सो रहा है गहरी नींद
जैसे सदियों तक जागा हो
इसी एक सुख के लिए
कोई कहां तक उतर सकता है
इसकी नींद के तल तक
ये जो बीच बीच में
निकलते हैं लघुकथाओं से जुलूस
या जो छपते हैं चंद नेताओं के
नित्यकर्मी बयान
या जो बजता है
मेटाडोरों में संगीत का विस्फोट
यह नींद में बड़बड़ाहट है इस शहर की
जानते हैं इस बात को पेशेवर चोर
कि जागना रखा है इस शहर ने
कुछ गोरखों के जिम्मे
यहां पिछले कुछ बरसों में
हुए हैं कितने बम धमाके
नज़दीकी सरहदों पर हुआ है कितनी बार
फौजों का शास्त्रार्थ
फिर भी खर्राटे मारता रहा यह शहर
इस शहर में नहीं आ रही मुझे नींद

□

हिजरत

जब मेरी उपस्थिति
मेरे न होने से बंहतर
लगने लगे
जब मैं एक भी शब्द कहने से पहले
दस बार सोचूं
जब बच्चे की सहज किलकारी तक से
पड़ता हो किसी की नींद में खलल
और जब दोस्तों के अभाव में
करना पडे एकांत में
किसी पत्थर के साथ सलाह-मश्विरा
तब मैं पड़ता हूं संघर्ष में अकेला
और सघन अंधेरे में दबे पांव
करता हूं शहर से हिजरत

□

बंसी पारिमू[1] से

तुम्हें समझाया था मैंने
मत करो चिनारों के काटे जाने पर हंगामा
मत चिल्लाओं डल झील की तबाही पर
मत कहो सिविल कर्फ्यू में भी
मरी हैं घरों में सत्ताईस मुसलमान गर्भवती बहनें
तुम्हें समझाया था मैंने
तुम लिखो रंगों से ऐसी कविताएं
जो तुम्हें मरवा डालेंगी एक दिन
मेरी तरह

□

1 प्रसिद्ध प्रगतिशील चित्रकार

19 जनवरी 1990 की रात

घाव की तरह
खुलती हैं मकानों की खिड़कियां
छायाओं की तरह झांकते हैं चेहरे हर तरफ
फैल रहा है बर्फ़ानी ठंड में शोर
हमारी हड्डियों की सुरंग में घुसने को मचलता हुआ
गालियां, कोंसने, धमकियां
किनता कुछ सुन रहे हैं हम

तहखाने में कोयले की बोरियों के पीछे
छिपाई गयीं मेरी बहनें
पिता बिजली बुझाकर घूम रहे हैं
कमरे में यों ही
रोने बिलखने लगे हैं मुहल्ले के बच्चे
होंठ और किवाड़
दोनों हैं बंद
बाहर कोई भी निकले
शब्द या आदमी
दोनों को खतरा है

□

गूंगे अंधेरों में

ओ मातृभाषा !
दया करो हमारे नवजात बच्चों पर
कहां जायेंगे हम तुम्हारे बिना
इन गूंगे अंधेरों में
गहमागहमी भरी सड़कों पर दौडती हुई
दूर दराज़ शहरों की बसों के दरवाजों पर
सवारियों के लटकते गुच्छों के बीच
फंसे हम याद करते हुए अपना गांव
पूछेंगे खुद से कौन है यहां हम
क्या है हमारा पता
फिर मजबूती से पकड़े रखेंगे
खिड़की के हत्थे को
और अगले स्टॉपों पर उतरते जाएंगे भीड़ में

□

ज्योति-पर्व

जलावतनी में
याद आती हैं अनगिनत दीवालियां
बह गया मेरी झुर्रियों से इस बीच
वितस्ता का इतना पानी
और सरसब्ज़ हो गया यह देश
यह केवल मैं ही हूं
जिसे नेहरू का गुलाब लगता है
गर्म लहू की बूंद जैसा
दीप जल रहे हैं उत्सवी मुद्रा में
सब तरफ
और हो रहा है लक्ष्मी-पूजन रातभर
मैंने बरसों से नहीं मनाई दीपावली
अपने घर में
शुक्रिया मेरे देश
मुजाहिदों ने आराम से जला डाला
मेरा घर
शुभकामनाएं तुम्हे ज्योति पव पर

□

एक व्यक्तिगत कविता

मेरी नन्हीं बिटिया की उंगली
मेरे हाथ में है
धुली हुई पृथ्वी पर फैल रही है
नरगिस की महक
हम टहल रहे हैं
बहुत दिनों के बाद हुई गीली दूब पर
बड़ों की तरह कायदे से चुप है
मेरी बिटिया
बरसों बाद
पड़ रहे हैं मेरे सूनेपन पर
उसके पांवों के निशान
हे भगवान
उसकी उंगली को मेरे हाथ का घना स्पर्श
लग रहा है पराया सा
उदास हैं मेरे हाथ की लकीरें
छिटक कर अलग हो जाती है मुझसे मेरी बच्ची
और मैं नींद से जागकर
मैं बरसों से खड़ा हूं अपनी अदालत में अकेला
अभी तक कोस रहा हूं अपने ठेस लगे मन को
बीत रहा है पहाड़ सा एक एक दिन
सूंघता हूं हथेली में ठहरी हुई
बिटियां की गंध
और मरता नही हूं फिर भी
इस मृत्युदंड से

□

बर्फ की याद

(महाराज कृष्ण संतोषी के लिए)

मत दिलाओ इन दिनों
बर्फ के गिरने की याद
मैं सोचना नहीं चाहता
उस सब के बारे में
जो कुछ हमसे छिन गया
और सहा
जो आज तक यहां हमने
किसके पास जाकर दिखाऊं
सीने में दबी बर्फ के नीचे
एक हरी कोंपल
तुम्हें मालूम भी नहीं होगा
पुरानी बर्फ को गला देता है
नया हिमपात
जिसे देखने के लिए इसी जन्म में
मैं बचाये हुए हूं खुद को
और दबी हुई कोंपल को
बर्फ़ की याद
मुझसे छीन लेगी
मेरी उम्र के बाकी बरस
मत दिलाओ इन दिनों
बर्फ़ के गिरने की याद

□

कुशल समाचार

उनके पास थीं
सैंकड़ों किस्म की गालियां
कोसनों और चिड़ों के पीछे थे
सीलन की तरह हमारे दुख
झठू और अफवाहों के बीच
दौड़ते थे लोग
और आशंकाओं से घबराकर मेरी मां
शनिवार के पीले चावल रख आती थी
सुबह सुबह गली में
जहां हर बार मूत्र के बाद कुछ हाथ
खुरचते थे हमारे घर की
बोसीदा दीवार
न हम मकान बदल सके
न बदली मूत्र की जगह
दोस्तों को लिखी चिट्ठी में हम
बदल नहीं सके कभी पहली पंक्ति भी
जो हमारी कुशलता का देती थी संकेत
और दोस्तों ने कभी संदेह भी नहीं किया
आज जबकि कुशलता की सूचनाएं
नहीं देती हैं मेरी कविताएं
मेरे दोस्तों को संदेह है
इसी बात पर

□

साइकिल

सीखने को तो आज भी सीख सकता हूं
पर मैं बार बार सपने में देखता हूं बचपन की एक जर्जर
दीवार के साथ पड़ी ज़ंग खाई साइकिल, जिसे छूता भी नहीं
हूं मैं
मैं जानता हूं सपने में भी कि साइकिल चलाना अगर सीख
गया मैं आज

तो उस दुख से धोना पड़ेगा हाथ जो अभावों के अंधेरों में
पैदा हुआ
और जिसे मैंने अपने जिगर में पाला
मैं सूखने नहीं देना चाहता स्मृति के तालाब में कर्नल साहब
की नहलायी जा रही भैंसों की देह से साबुन की चुराई झाग
को
जो आज तक जिन्दा है मेरी खाल पर
हालाकि इस बात का सीधा संबंध बचपन की साइकिल से है
जिसे मै कभी नहीं चला सका
मैं सीखने को तो आज भी सीख सकता हूं साइकिल चलाना
लेकिन यह वो चलाना नहीं होगा जिसे मैंने आज तक मन में
संजोये रखा
और इस दुख की ताकत से ही मैं साइकिल चलाते लोगों
और साबुन से नहाते बच्चों को देखकर खुश होने का
दुःसाहस करता फिरता हूं समय के साइकिल पर

□

हमारे देश में अलग अलग भाषाओं, जातियों, धर्मो, संसकृतियों के बीच परस्पर सद्भाव और सह-अस्तित्व को मजबूत करना ही महत्वपूर्ण राजनीतिक कर्म है। अनिश्चितता और संभावनाओं के मौजूदा दौर में हम नैतिक साहस को कम न होने दें तो हमारी लेखकीय स्वायत्तता भी बरकरार रह सकेगी।

पुनश्च :

निर्वासन में लिखी इस संग्रह की कविताओं के बारे में रसूल हमजातोव की यह बात दोहराना चाहूंगा कि निश्चय ही हम कवि सारी दुनिया के लिए उत्तरदायी है, मगर जिसे अपने पर्वतों से प्यार नही, वह सारी पृथ्वी का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता।

28 अगस्त 1996